भक्ति और ज्ञान के प्रमुख आचार्यों का परिचयात्मक अध्ययन

डो.विष्णुप्रसाद चन्द्रकान्त त्रिवेदी

जी.एम.डी.सी.आट्‌र्स एवं कोमर्स कोलेज,

नखत्राणा, जि.-कच्छ, गुजरात

श्रीविष्णोः श्रवणे परीक्षदभवद् वैयासकिः कीर्तने प्रह्लादः स्मरणे तदंघ्रिभजने लक्ष्मीः पृथुः पूजने ।
अक्रूरस्त्वभिवन्दने कपिपतिर्दास्येऽथ सख्येऽर्जुनः सर्वस्वात्मनिवेदने बलिरभूत् कृष्णाप्तिरेषां परम् ।।

“ नवधा भक्ति के अन्तर्गत श्रवण भक्ति में महर्षि परीक्षित, कीर्तन में व्यासजी के पुत्र सुखदेवजी, भगवत्स्मरण में प्रह्लादजी, भगवान के चरण कमलों की सेवा में श्रीलक्ष्मीजी, पूजन में आदिराज पृथु, चरणकमलों के वन्दन में अक्रूरजी, दास्य भक्ति में कपिराज श्रीहनुमानजी, सख्य भक्ति में नररूप श्रीअर्जुनजी और सर्वस्व निवेदन में श्रीबलिजी हुए है ।। इन सभी भक्ति के आचार्यों को भगवत्प्राप्ति हुई है।। ”

ऐसे ही भक्ति और ज्ञान के प्रकाशक कई वन्दनीय आचार्यों / महर्षियों का पुराण ग्रन्थों में वर्णन मिलता है । जिन भक्तोंने भगवान के चतुर्भुज रूप का ध्यान अपने हृदय में धारण किया, वे सभी हमारे अनेक प्रकार के रक्षक एवं प्रेरक है । हमारे जीवन के मोहरूपी अन्धकार को दूर करने के लिए सदा ज्ञान - भक्ति का प्रकाश करानेवाले कतिपय प्रमुख आचार्यों का परिचय इस प्रकार है ।

१. महर्षि पुलह

यह ब्रह्माजी के मानसपुत्र और षोडश प्रजापतिओं में एक है । सदा संसार के हितसाधन में लगनेवाले रहते थे । अपने पिता की आज्ञा से दक्ष प्रजापति और महर्षि कर्दम की कन्याओं को पत्नीरूप से स्वीकार करके सृष्टि की वृद्धि की । अनेकों योनि और जातियों की सन्तान इनसे हुई । इन्होंने महर्षि सनन्दन की शरण ग्रहण करके सम्प्रदाय की रक्षा करते हुए अपने तत्त्वज्ञान का सम्पादन किया और फिर अपने शरणागत जिज्ञासु आचार्य गौतम को उसका दान करके संसार में उसका विस्तार किया । पुराणों में इनको भगवद्भाव की चर्चा कई स्थानों पर लिखी हुई मिलती है ।

२. महर्षि अगस्त्य

ये एक मन्त्रदृष्टा ऋषि है । इनकी उत्पत्ति के सम्बन्ध में विभिन्न प्रकार की भिन्न भिन्न कथाएँ मिलती है । एक बार विन्ध्याचल पर्वत ने सूर्य के आने जाने का स्थान रोक दिया । इसलिए सूर्य अपनी सहायता के लिए शरणार्थी हुए । सूर्य की सहायता के लिए महर्षि अगस्त्य स्वयं विन्ध्याचल के पास उपस्थित होकर विन्ध्याचल पर्वत को बडी श्रद्धा और भक्ति से नमन किया और कहा, ' मुझे तीर्थों के पर्यटन करने के लिए दक्षिण दिशा में जाना है, परंतु तुम्हारी इतनी बडी ऊँचाई लांघकर उस तरफ जाना बहुत ही कठिन कार्य है । इसलिए कैसे जाऊँ ?' अगस्त्य मुनि की निवेदनभरी बात सुनकर विन्ध्याचल तुरन्त ही अगस्त्य मुनि के चरणों में लेट गया । अगस्त्य मुनि ने बडी आसानी से विन्ध्याचल को पार किया और जाते जाते विन्ध्याचल को यह कहा कि, ' जब तक मैं न लौटुं तब तक तुम इसी अवस्था में पडे रहना ।' इस प्रकार अगस्त्य मुनि ने बडी ही चतुराई से परोक्ष रूप से सूर्य की सहायता कर दी, क्योंकि न अगस्त्य मुनि वापस लौटे और न ही विन्ध्याचल बडा हुआ।

वाल्मीकि रामायण के अनुसार भगवान श्रीराम के वनगमन के समय महर्षि अगस्त्य मुनि के आश्रम में पधारे थे । प्रेमलक्षणा भक्ति के मूर्तिमान स्वरूप सुतीक्ष्ण इन्हीं के शिष्य थे । लङ्का पर विजय प्राप्त कर भगवान श्रीराम अयोध्या वापस आ गये । उनके वापस आने पर श्रीराम के राज्याभिषेक के दौरान महर्षि अगस्त्य वहाँ पधारे और भगवान श्रीराम मो अलग अलग प्रकार की कई कथाएँ सुनाई । ये सारी बातें वाल्मीकि रामायण के उत्तरकाण्ड में पाई जाती है । इनके द्वारा रचित अगस्त्य संहिता नामक एक उपासना सम्बन्धी बडा ही सुन्दर ग्रन्थ भी है ।

३. महर्षि पुलस्त्य

ब्रह्माजी के मानसपुत्रों में से एक और है महर्षि पुलस्त्य । वे जगत की रक्षा - कल्याण के लिए सदा तपस्या में लगे रहते थे । इनका स्वभाव इतना दयालु है कि जब एक बार अपनी दुष्टता के कारण रावण को कार्तवीर्य सहस्रार्जुन के यहाँ बन्दी होना पडा था, तब उन्होंने ही अपने दयालु स्वभाव के कारण रावण को मुक्त करने के लिए कहा था । उनकी आज्ञा सुनते ही सहस्रार्जुन ने तुरन्त ही रावण को अपने बन्दीगृह से मुक्त कर दिया । पुलस्त्य की सन्ध्या, प्रतीची आदि कई स्त्रियाँ और दत्तौलि नामक कई पुत्र थे । यही दत्तोलि आगे चलकर स्वायम्भुव मन्वन्तर में अगस्त्य नाम से प्रसिद्ध हुए । उन्हें उनकी पत्नी हविर्भू से विश्रवा नामक पुत्र हुआ, जिनसे क्रमशः कुबेर, रावण आदि पुत्रों का जन्म हुआ । ये योगविद्या के आचार्य थे । उन्होंने ही देवर्षि नारद को वामनपुराण की कथा सुनाई थी । ये अब भी जगत की रक्षा - दीक्षा में तत्पर है ।

४. महर्षि च्यवन

इनके पिता भृगु और माता पुलोमा थे । माता का गर्भ च्यवित होने से उनका नाम च्यवन पडा । भृगुपुत्र बडे ही तपस्वी और तेजस्वी पुरुष थे । एक बार तपस्या में इतने लीन हो गये कि उनकी आँखों को छोडकर पूरे शरीर पर दिमक चढ गई । राजा शर्याति की पुत्री सुकन्या की बल्यावस्था के कारण महर्षि च्यवन की आँखों में कांटे चुभो दिये । अपनी कन्या की गलती से व्यथित राजा ने महर्षि च्यवन के साथ सुकन्या का ब्याह कर दिया । अश्विनीकुमारों की कृपा दृष्टि से महर्षि च्यवन को फिर से युवावस्था प्राप्त हुई और सुकन्या को सुन्दर और रूपवान पति मिला, जिनसे उनका दाम्पत्य जीवन सुखमय व्यतीत होने लगा ।

५. महर्षि सौभरि

सौभरि ऋषि वृन्दावन के निकट कालिन्दी के तट पर रमणक नामक द्वीप में रहते थे । ये सदा जल के भीतर समाधि लगाकर तपस्या करते रहते थे । एक बार समाधि भंग होने के कारण उनकी दृष्टि मत्स्य दम्पती के विहार पर पडी और वे भी सुखभोग की ओर प्रवृत्त होने लगे । राजा मान्धाता की पचास पुत्रीओं से ब्याह किया और अपने तपोबल से एक वैभवी नगर का निर्माण करवा दिया । साथ ही अपने भी पचास रूप बना लिये । सभी पत्नीयों से दस दस पुत्र उत्पन्न हुए । नित नई समस्याओं के कारण महर्षि को अपने कर्तृत्व पर पश्चात्ताप हुआ और वे वानप्रस्थाश्रमी बनकर भगवान की भक्ति में लीन हो गये ।

६. महर्षि वसिष्ठजी

इनकी उत्पत्ति का वर्णन पुराणों में विभिन्न रूप से दिखाया गया है । ये कहीं ब्रह्मा के मानसपुत्र, कहीं आग्नेयपुत्र और कहीं मित्रावरुण के पुत्र कहे गये है । अपने पिता ब्रह्माजी के समझाने पर वसिष्ठजीने सूर्यवंशी राजाओं के निन्दित होने पर भी पौरोहित्य कार्य को स्वीकार किया, कारण यही था कि इसी वंश में भगवान श्रीराम जन्म लेनेवाले थे । भगवान श्रीराम को शिष्यरूप में पाकर वसिष्ठजीने अपना पुरोहितजीवन सफल किया और न केवल वेद - वेदाङ्ग ही बल्कि योगवासिष्ठ जैसे अपूर्व ज्ञानमय ग्रन्थों का उपदेश करके अपने ज्ञान को सफल किया । वे क्षमा की मूर्ति भी कहे जाते है । महर्षि विश्वामित्र ने अपने सो पुत्रों का वध कर दिया था, फिर भी उन्होंने सामर्थ्य होने पर भी विश्वामित्र का किसी भी प्रकार का अनिष्ट नहीं किया । इन्होंने सत्सङ्ग को तपस्या से भी बढकर माना है और इनकी पुष्टि स्वयं शेषावतारी नारायण ने भी की है ।

७. महर्षि कर्दमजी

कर्दमजी की उत्पत्ति ब्रह्माजी की छाया से हुई । सृष्टि उत्पत्ति हेतु महर्षि कर्दमजी ने बिन्दु सरोवर तीर्थ में दस हजार वर्षों तक तपस्या के द्वारा श्रीहरि की आसाधना की । भगवान ने प्रसन्न होकर मनु और शतरूपा की पुत्री से ब्याह होने का वरदान दिया । पत्नी देवहूति के गर्भ से सर्वप्रथम नौं कन्याएँ और बादमें स्वयं नारायण श्रीकपिल के रूपमें अवतीर्ण हुए, जिन्होंने सांख्यशास्त्र का विस्तार किया ।

८. महर्षि अत्रिजी

माता अनसूया के पति अत्रि भी ब्रह्माजी के मानसपुत्र थे । महर्षि अत्रि अपने नाम के अनुसार त्रिगुणातीत थे और अनसूया भी असूयारहित थी । सृष्टि उत्पत्ति हेतु तपस्या करनेवाले इस दम्पतीने ब्रह्मा, विष्णु और शङ्कर को पुत्ररूप में प्राप्त किया । विष्णु के अंश से दत्तात्रेय, ब्रह्मा के अंश से चन्द्रमा और शङ्कर के अंश से दुर्वासा को प्राप्त किया ।

९. महर्षि गर्गाचार्यजी

श्रीगर्गाचार्यजी यदुवंशीयों के पुरोहित थे और बडे तपस्वी थे । वसुदेवजी के कहने पर गोकुल जाकर देवकी और नन्द के पुत्रों का विधिवत् संस्कार किया । श्रीगर्गाचार्यजी ने गर्ग संहिता नामक ग्रन्थ की रचना की, जिसमें भगवान श्रीकृष्ण की अति मधुर रसमयी लीलाओं का बडी ही मधुरता के साथ वर्णन किया गया है ।

१०. महर्षि गौतमजी

महर्षि गौतमजी सप्तर्षियों में एक ऋषि है । देवी अहल्या इनकी धर्मपत्नी है । इनके पुत्र का नाम शतानन्द था, जो महाराज जनक के राजपुरोहित थे । महर्षि गौतम का चरित्र अलौलिक है । इनके जैसा त्याग, वैराग्य, तप और भगवद्भाव अन्य जगह देखना असम्भव सा है ।

११. महर्षि लोमशजी

महर्षि लोमशजी चिरंजीवी है, यद्यपि सप्त चिरंजीवीयों में उनका नाम नहीं है । शरीर पर बहुत से रोम होने के कारण इनको लोमश कहते हैं । द्विपरार्ध व्यतीत होने पर जब ब्रह्माजी की आयु समाप्त होती है तो इनका एक रोम गिरता है । इतने दीर्घायु होकर भी शरीर की क्षणभंगुरता का निरन्तर अनुसन्धान करते हुए सर्वथा अपरिग्रहपूर्वक सर्वदा हरिचिन्तन में तल्लीन रहते हैं । ये भगवान श्रीराम के अनन्य भक्त है । इनके ग्रन्थ का नाम लोमश रामायण है, जिसमें श्रीरामजी का बहुत यश गाया गया है ।

१२. महर्षी भृगुजी

ये भी ब्रह्माजी के मानसपुत्र हैं । चाक्षुष मन्वन्तर में इनकी सप्तर्षीयों में गणना होती थी । इनकी तपस्या का अमित प्रभाव है । दक्ष की कन्या ख्याति को इन्होंने पत्नी रूपमें स्वीकार किया था, उनसे धाता - विधाता नाम के दो पुत्र और श्री नाम की एक कन्या हुई । इन्हीं श्री का पाणिग्रहण भगवान नारायण ने किया था । प्रायः सभी पुराणों में महर्षि भृगु की चर्चा आयी है । इनकी स्मृति हमें भगवान की स्मृति प्रदान करती है । बालकृष्ण के मूर्तिस्वरूप में एक पैर रहता है, जो भृगुछाञ्छन कहलाता है । महर्षि भृगु ने भगवान विष्णु को पाद प्रहार किया था, ऐसी एक प्रचलित कथा भी है ।

१३. महर्षि दालभ्यजी

इन्होंने भगवान दत्तात्रेयजी से भक्तियोग की शिक्षा पायी थी, इनकी साधना से सन्तुष्ट होकर भगवान श्रीहरि ने प्रत्यक्ष दर्शन दिये थे । इन्होंने धर्म, ज्ञान, वैराग्य, भक्ति प्रतिपादक संहिता ग्रन्थ का प्रणयन किया था, जिसे दालभ्य संहिता कहे हैं । इनकी परमभागवतों में गणना की जाती है । पुराणों और महाभारत में इनका अनेक स्थानों पर महान भक्त, ज्ञानी और नीतिमान ऋषि के रूप में वर्णन हुआ है ।

१४. महर्षि अङ्गिराजी

यह ऋषि भी ब्रह्माजी के मानसपुत्र है । इनकी तपस्या और उपासना इतनी तीव्र थी कि इनका तेज और प्रभाव अग्नि की अपेक्षा भी अधिक बढ गया । उस समय अग्निदेव भी जल में रहकर तपस्या करते थे । बादमें अग्नि का मान रखने के लिए उन्होंने अग्नि को पुत्र के रूप में स्वीकार किया और बृहस्पति नाम भी दे दिया । कहीं अङ्गिरा अग्नि के पुत्र कहे जाते है, ऐसा सन्दर्भ भी मिलता है । महर्षि अङ्गिराने ज्ञान, भक्ति और कर्म द्वारा सुप्त जीवों को जाग्रत करके भगवान की ओर अग्रसर करने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया है ।

१५. महर्षि श्रृङ्गीजी

एक बार विभाण्डक मुनि एक कुण्ड में समाधि लगाये बैठे थे । उर्वशी अप्सरा को देखकर उनका वीर्य स्खलित हो गया, जिसे एक प्यासी मृगी ने पी लिया । उस मृगी से उनका जन्म हुआ । माता के समान इनके सिर पर भी एक सींग था, अतः इनका नाम श्रृङ्गी पडा । इनको ऋष्यश्रृङ्ग भी कहते है । राजा रोमपाद की कन्या शान्ता से उनका विवाह हुआ । राजा दशरथ के पुत्रेष्टि यज्ञ में भी महर्षि श्रृङ्गी उपस्थित रहे थे ।

१६. महर्षि माण्डव्यजी

इसी महर्षि के श्राप से साक्षात् धर्मराज ही विदुरजी के रूप में उत्पन्न हुए थे । ये भी ज्ञानी और भगवद्भक्त थे । बाल्यावस्था की गलती के कारण दिये गये दण्ड के लिए उन्होंने धर्मराज को शाप दे दिया था ।

१७. महर्षि विश्वामित्रजी

महर्षि विश्वामित्रजी के समान सतत लगन के पुरुषार्थी ऋषि शायद ही कोई और हों । इन्होंने अपने पुरुषार्थ से क्षत्रियत्व से ब्रह्मत्व प्राप्त किया था । राजर्षि से ब्रह्मर्षि बनें, सप्तर्षियों में अग्रगण्य हुए और वेदमाता गायत्री के द्रष्टा ऋषि भी हुए ।

१८. महर्षि जमदग्नि

महर्षि जमदग्नि बडे ही ज्ञानी भक्त थे । ईसी कारण स्वयं नारायण ने उनकी पत्नी रेणुका से परशुराम के रूप में अवतार धारण किया था । इनका भी सप्तर्षियों में स्थान है ।

१९. निष्कर्ष

इस प्रकार कई ऋषि - महर्षिओं ने अपने ज्ञान के बल से अपने अपने आराध्य देवों की तपस्या व उपासना की । बादमें ज्ञानी भक्त भी बनें । महर्षि दुर्वासा, जाबालि, मार्कण्डेय, कश्यप जैसे कई अन्य ऋषियों के नामोल्लेख पुराणसाहित्य में प्राप्त होते है । भक्ति सम्प्रदाय में वैसे तो भक्ति की ही प्रधानता विद्यमान रहती है, किन्तु ऐसे कई आचार्योंने अपने ज्ञान को भगवद्भक्ति में सम्मिलित करके भक्तजन समुदाय को एक नई राह देने का स्तुत्य प्रयास किया है । ज्ञान और भक्ति दोनों ही मोक्षप्राप्ति में साधन बन सकते है ।

सन्दर्भ साहित्य

१. *वाल्मीकिरामायण खण्ड १ – २, संवत २०६५, गीताप्रेस, गोरखपुर ।*
२. *भक्तमाल विशेषाङ्क - संवत २०६९, गीताप्रेस, गोरखपुर ।*
३. *श्रीविष्णुपुराण - संवत २०५७, गीताप्रेस, गोरखपुर ।*
४. *महाभारत, भाग १ – ६, संवत २०६५, गीताप्रेस, गोरखपुर ।*
५. *श्रीमद्भागवतमहापुराणम्, संवत २०६२, गीताप्रेस, गोरखपुर ।*